ISSN 2454-5163

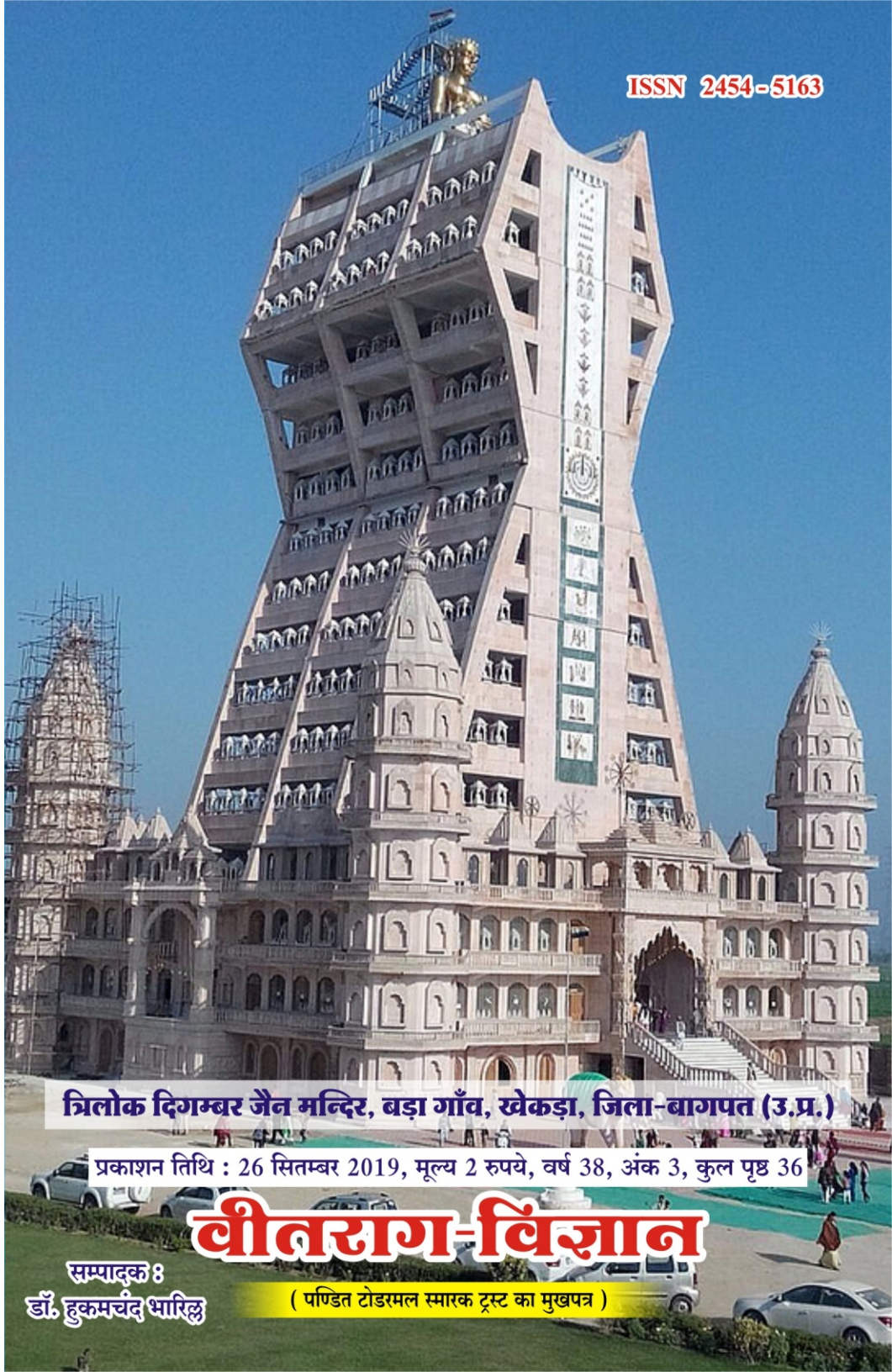

त्रिलोक दिगम्बर जैन मन्दिर, बड़ा गाँव, खेकड़ा, जिला-बागपत (उ.प्र.)

प्रकाशन तिथि : 26 सितम्बर 2019, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 38, अंक 3, कुल पृष्ठ 36

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

वीतराग-विज्ञान (434)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन :(0141)2705581, 2707458
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com
ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	10200

धर्म का कारण

शुद्ध स्वभाव को न जाने और अन्य के आश्रय से जो धर्म माने उसने धर्म का स्वरूप या धर्म की रीति को नहीं जाना है। शुभ राग को शास्त्रों में कहीं धर्म का परम्परा कारण कहा हो तो वह उपचार से है - ऐसा समझना चाहिए; जब उस राग का आश्रय छोड़कर शुद्ध स्वभाव का आश्रय किया तभी धर्म हुआ और पूर्व के राग को उपचार से कारण कहा; किन्तु वास्तविक कारण वह नहीं है; वास्तविक कारण तो शुद्धस्वभाव का आश्रय किया वही है।

– आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 505

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 38 (वीर नि. संवत् - 2545) 434 अंक : 3

अपनी सुधि भूल...

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायो।
ज्यों शुक नभ चाल विसरि, नलिनी लटकायो।।टेक।।
चेतन अविरुद्ध शुद्ध, दरश-बोधमय विशुद्ध।
तजि जड़ फरसरूप, पुद्गल अपनायो।।
अपनी सुधि भूल...।। 1 ।।
इन्द्रिय सुख-दुख में नित्त, पाग राग-रुख में चित्त।
दायक भव विपति वृन्द, बन्ध को बढायौ।।
अपनी सुधि भूल...।। 2 ।।
चाह दाह दाहै, त्यागौ न ताह चाहै।
समता सुधा न गाहै, जिन निकट जो बतायौ।।
अपनी सुधि भूल...।। 3 ।।
मानुष भव सुकुल पाय, जिनवर शासन लहाय।
'दौल' निजस्वभाव भज, अनादि जो न ध्यायौ।।
अपनी सुधि भूल...।। 4 ।।

– कविवर पण्डित दौलतरामजी

पधारिये! अवश्य पधारिये!! || श्री वीतरागाय नमः || तत्त्वज्ञान का अपूर्व लाभ लीजिए!!!

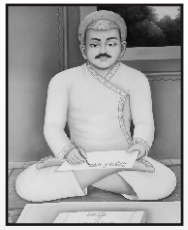

आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन स्थित पंचतीर्थ जिनालय

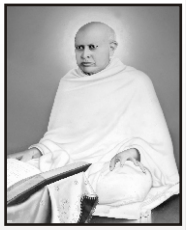

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी

पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट, जयपुर द्वारा
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

22वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(रविवार, दिनांक 13 अक्टूबर से रविवार 20 अक्टूबर, 2019 तक)

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के निर्देशन में आयोजित उक्त शिविर में ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, डॉ. शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, डॉ. प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा आदि विशेषज्ञ विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं के माध्यम से जैनदर्शन के विविध विषयों का गहराई से अध्ययन/अध्यापन किया जायेगा। अतः अन्य शिविरों से पृथक् यह शिविर जैनदर्शन के सूक्ष्म अध्ययन के इच्छुक जिज्ञासुओं के लिये एक स्वर्ण अवसर होगा।

आप सभी को शिविर में पधारने हेतु
हार्दिक आमंत्रण है।

नोट : कृपया अपने आगमन की पूर्व सूचना अवश्य देवें।

: संपर्क :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) फोन : 0141-2705581, 2707458
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

सम्पादकीय

योगसार अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

प्रश्न – परमात्मा तो अरहंत और सिद्ध दोनों हैं; पर आपने केवल सिद्ध परमात्मा का उल्लेख क्यों किया, अरहंत का क्यों नहीं किया?

उत्तर – उक्त आठ विशेषणों में एक निकल (देह रहित) नामक विशेषण भी है; उससे यह प्रतीत होता है कि योगीन्दुदेव को यहाँ परमात्मा में अरहंत देव को लेना इष्ट नहीं हैं; क्योंकि अरहंत परमात्मा देह सहित ही होते हैं।

यहाँ परमात्मा को आठ विशेषणों से संबोधित किया गया है। इनमें कुछ विशेषण ऐसे भी हैं, जिनका प्रयोग अन्य मतों द्वारा मान्य ईश्वरीय अवतारों के लिये भी होता है या होता रहा है; पर यहाँ यह बात अत्यन्त स्पष्ट है कि यहाँ इनका प्रयोग उक्त अर्थों में नहीं हुआ है।

यहाँ तो इन विशेषणों का अर्थ वही है; जो यहाँ बताया गया है।

इन विशेषणों के आधार पर ऐसा अर्थ करना कि योगीन्दुदेव अत्यन्त उदार थे या वे अन्य मत के उक्त अवतारों को वीतरागी-सर्वज्ञ परमात्मा मानते थे – यह बात उचित नहीं है।

योगीन्दुदेव को उदार कह कर ढुलमुल बताना; उनके प्रति अन्याय है, उनकी अविनय है, उनका अपमान है।

इससे अधिक हम और क्या कह सकते हैं? वे सच्चे वीतरागी सन्त थे। उनकी जैनदर्शन में अगाध आस्था थी।

वे एकमात्र सर्वज्ञ-वीतराग परमात्मा के ही उपासक थे। किसी भी रागी-द्वेषी देवता के नहीं।

वे किसी ऐसे भगवान को स्वीकार नहीं करते थे, जो जगत का

कर्त्ता-धर्त्ता और हर्त्ता/नाशकर्त्ता हो।

जैनदर्शन में तो सकल और निकल - इसप्रकार दो प्रकार के परमात्मा होते हैं; जो अरहंत और सिद्ध हैं। सिद्ध तो कुछ करते ही नहीं; अरहंत की भी मात्र दिव्यध्वनि ही खिरती है।

ध्यान रहे न तो यहाँ अरहंत-सिद्ध को कर्त्ता-धर्त्ता बताया जा रहा है और न यहाँ योगीन्दु को जगत के कर्त्ता-धर्त्ता-हर्त्ता ब्रह्मा, विष्णु, महेश का अनुयायी बताया जा रहा है।

नामों के संदर्भ में इस तरह के प्रयोग करने की परंपरा जैनदर्शन में रही है। ये सब सार्थक नाम हैं और इन नामों का क्या अर्थ है - यह पृष्ठ २८ पर बताया जा चुका है।

आचार्य मानतुंग द्वारा रचित भक्तामर स्तोत्र में भी एक इसप्रकार का छन्द पाया जाता है; जिसमें भगवान आदिनाथ को बुद्ध, शंकर विधाता आदि विशेषणों से संबोधित किया है।

वह छन्द इसप्रकार है -

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्
त्वं शंकरोऽसि भुवन-त्रय-शंकरत्वात्।
धातासि धीर-शिव-मार्ग-विधेर्विधानाद्
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि॥ २५॥[१]

हे भगवन्! आप ही बुद्ध हो; क्योंकि आप विबुधार्चित बुद्धि के बोध वाले हो।

विबुध शब्द का अर्थ देवता भी होता है और विद्वान् भी होता है। तात्पर्य यह है कि देवताओं और विद्वानों द्वारा अर्चित बुद्धि-बोध के धनी अर्थात् केवलज्ञान के धनी होने से हे भगवन्! **आप ही बुद्ध हो।**

हे भगवन्! आप **शंकर** हो; क्योंकि आप तीन लोकों में शान्ति करने

१. भक्तामर स्तोत्र, श्लोक २५

वाले हो।

हे भगवन्! आप ही ब्रह्मा हो; क्योंकि आप मोक्षमार्ग की विधि का विधान करनेवाले हो। मुक्ति का मार्ग बताने वाले हो।

हे भगवन्! आप ही **पुरुषोत्तम** हो - यह बात व्यक्त ही है।

तात्पर्य यह है कि हे आदिनाथ भगवन्! आप स्वयं बुद्ध हैं, शंकर हैं, विधाता हैं और पुरुषोत्तम हैं।

बौद्धधर्म द्वारा मान्य देव को बुद्ध, शैव धर्म द्वारा मान्य देव को शंकर, संसार के निर्माता देवता को विधाता और लोकरक्षक देवता को पुरुषोत्तम (विष्णु के अवतार) कहा जाता है।

हे आदिनाथ भगवन्! आप केवलज्ञानी होने से बुद्ध हैं, शान्ति करने वाले होने से शंकर हैं, मुक्तिमार्ग के विधाता होने से ब्रह्मा हैं और आप ही उत्तम पुरुष होने से पुरुषोत्तम हैं - यह बात व्यक्त ही है, अत्यन्त स्पष्ट ही है। अतः आपके ये नाम सार्थक ही हैं।

जिनागम में इसप्रकार के छन्द और भी अनेक उपलब्ध होते हैं, जिनमें कतिपय इसप्रकार हैं -

"यो विश्वं वेद-वैद्यं जनन-जलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा।
पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम्॥
तं वन्दे साधुवन्द्यं निखिलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं।
बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा॥[१]

जिसने जानने योग्य सब कुछ जान लिया है; जिसने नानाविध तरंगोंवाले संसार-समुद्र के पार को देख लिया है, जिसकी वाणी पूर्वापर विरोध रहित, लोकोत्तर, अनुपम और निर्दोष है, जो सम्पूर्ण गुणों का खजाना है, जिसने आत्म-विकाररूप वैरियों का ध्वंस कर दिया है और इसीलिए जो महात्माओं

१. अकलंकस्तोत्र -छन्द ९, प्रवचनप्रकाश पृष्ठ-१

के द्वारा वन्दनीय है; उसे मैं प्रणाम करता हूँ; भले ही वह बुद्ध हो, वर्द्धमान हो अथवा ब्रह्मा हो या विष्णु तथा शिव हो।

भवबीजाङ्कुरजननाः रागाद्याः क्षयमुपगता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै।।[१]

जिसके संसार रूप बीज के अंकुर को उत्पन्न करने वाले रागादि दोषों का क्षय हो गया है; उसके लिए मेरा प्रणाम है; फिर भले ही उसका नाम ब्रह्मा हो, विष्णु हो, महादेव अथवा जिन हो।''

पण्डित जुगलकिशोरजी मुख्त्यार ने **मेरी भावना** में भी लिखा है -

जिसने राग-द्वेष-कामादिक जीते
सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्षमार्ग का,
निस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा
या उसको स्वाधीन कहो।
भक्तिभाव से प्रेरित हो यह
चित्त उसी में लीन रहो।।

जिसने राग-द्वेष एवं काम विकारादि भावों को जीत लिया हो, वीतरागी हो; सम्पूर्ण जग को जान लिया हो, सर्वज्ञ हो और सभी जीवों को मुक्तिमार्ग का बिना किसी स्वार्थ के उपदेश दिया हो, हितोपदेशी हो; वही परमात्मा है, सच्चा देव है।

उसका नाम कुछ भी क्यों न हो; बुद्ध हो, वीर हो, जिन हो, हर (महादेव) हो, हरि (विष्णु) हो, ब्रह्मा हो या उसे आप स्वाधीन कहते हों। नाम से हमें कुछ फरक नहीं पड़ता; पर उसमें वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी - ये तीन गुण अवश्य होना चाहिये।

१. महादेव स्तोत्र छन्द ४३, प्रवचनप्रकाश पृष्ठ-१

इसप्रकार हम देखते हैं कि योगीन्दुदेव अपने परमात्मा को उक्त आठ नामों से पुकारते हैं।

ध्यान रहे उक्त नामों के आधार पर हमें उनके लोक प्रचलित अर्थों को ग्रहण नहीं करना चाहिये; अपितु पृष्ठ २८ पर बताये गये अर्थ को ही ग्रहण करना चाहिये।

योगसार दोहा १०-१२

अब तक जीव के बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा - ये तीन प्रकार बताये गये। अब सबसे पहिले बहिरात्मा के स्वरूप पर प्रकाश डालते हैं; जो इसप्रकार है -

देहादिउ जे पर कहिय, ते अप्पाणु मुणेइ।
सो बहिरप्पा जिण-भणिउ, पुणु संसारु भमेइ।। १०।।

देहादिउ जे पर कहिय, ते अप्पाणु ण होहि।
इउ जाणेविणु जीव तुहुँ, अप्पा अप्प मुणेहि।। ११।।

अप्पा अप्पउ जइ मुणहि, तो णिव्वाणु लहेहि।
पर अप्पा जइ मुणहि तुहुँ, तो संसारु भमेहि।। १२।।

(हरिगीत)

जिनवर कहें 'देहादि पर' जो उन्हें ही निज मानता।
संसार-सागर में भ्रमें वह आतमा बहिरातमा।। १०।।

'देहादि पर' जिनवर कहें ना हो सकें वे आतमा।
यह जानकर तू मान ले निज आतमा को आतमा।। ११ ।।

तू पायगा निर्वाण माने आतमा को आतमा।
पर भवभ्रमण हो यदी जाने देह को ही आतमा।। १२ ।।

जो पर कहे गये हैं - ऐसे देह आदि पदार्थों को, जो जीव आत्मा मानता है; उसे जिनेन्द्र भगवान बहिरात्मा कहते हैं, वह बहिरात्मा संसार में बारंबार परिभ्रमण करता है।

देह आदि जो पदार्थ पर कहे गये हैं; वे आत्मा नहीं हो सकते।

हे जीव! तू यह जानकर आत्मा को ही आत्मा मान।

हे जीव! यदि तू आत्मा को ही आत्मा समझेगा तो निर्वाण (मोक्ष) प्राप्त करेगा। यदि तू पर को ही आत्मा मानेगा तो संसार में परिभ्रमण करेगा।

दोहा १० में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि आगम में जिन देहादि पदार्थों को आत्मा से भिन्न कहा है; उन पदार्थों को अपना मानना बहिरात्मापन है और वे बहिरात्मा जीव अनन्तकाल तक संसार में परिभ्रमण करते हैं।

दोहा ११ में कहते हैं कि वे देहादि परपदार्थ कभी आत्मा नहीं हो सकते, आत्मा के नहीं हो सकते। इसलिये हे आत्मन्! तू उनसे अपनापन तोड़कर अपने आत्मा में ही अपनापन स्थापित कर, उसे ही अपना मान।

आगे १२वें दोहा में कहते हैं कि यदि तू अपने आत्मा को आत्मा जान लेगा, मान लेगा; तो तुझे मुक्ति की प्राप्ति होगी। तू अल्पकाल में ही मुक्ति को प्राप्त करेगा। यदि तू देह को ही आत्मा मानता रहेगा, स्त्री-पुत्रादि परपदार्थों में ही अपनापन करता रहेगा तो इस संसार में अनन्त दुख भोगते हुये अनन्तकाल परिभ्रमण करना होगा।

इसलिये हमारी शिक्षा पर गंभीरता से विचार कर!

इन तीन दोहों में अत्यन्त सरलता के साथ यह कह दिया गया है कि देहादि पदार्थों में से एकत्व-ममत्व छोड़कर अपने आत्मा में ही एकत्व-ममत्व कर; क्योंकि वास्तव में तू आत्मा ही है।

उक्त दोहों का भाव स्पष्ट करते हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजी स्वामी कहते हैं -

''यह आत्मा शुद्ध चैतन्य अखण्ड अभेद पदार्थ है। उसे छोड़कर शरीर, धन, धान्य, मकान, कीर्ति, शरीर की क्रिया तथा अन्दर के पुण्य-पाप के भाव ये सब मेरे हैं; ऐसा मानने वाला बहिरात्मा-मिथ्यादृष्टि अज्ञानी है। ज्ञान आनन्द आदि त्रिकाली शुद्ध स्वरूप में जो नहीं हैं; ऐसे शुभाशुभ विकल्प,

चार गति, लेश्या, छह काय, कषाय आदि के भाव परभाव हैं। श्रावक के छह आवश्यक के भाव, मुनि के पंच महाव्रतादि के भाव ये आत्म-स्वरूप न होने से आत्मा से बाह्य हैं, ऐसा सर्वज्ञ परमेश्वर कहते हैं।[१]

आत्मा ज्ञायकमूर्ति, चैतन्य सूर्य, आनन्द का कंद, स्वयंसिद्ध स्वतत्त्व है, ये मैं हूँ और इससे बाह्य सब पर हैं। यह महान सिद्धान्त है। आत्मा जैसा है वैसा जाने और माने वह पण्डित है; उससे विरुद्ध मानने वाला तो अपण्डित अर्थात् अज्ञानी है।[२]

बहुत ही कम शब्दों में सार ही सार भर दिया है। शुभाशुभ भाव, व्यवहार आचरण, क्रिया, देह, वाणी, मन - ये सब ज्ञानमूर्ति, चैतन्य सूर्य प्रभु आत्मा से भिन्न जो पदार्थ कहे गये हैं, वे आत्मा नहीं हो सकते। वे तो अनात्मा हैं, उन्हें बहिरात्मा अपना मानता है।[३]

यदि आत्मा को आत्मा समझेगा अर्थात् भगवान आत्मा ज्ञान आनन्द का पिण्ड, ज्ञातादृष्टा है, यही मेरा स्वरूप है, ऐसा ही मैं आत्मा हूँ; ऐसा आत्मा को समझेगा तो मुक्ति पावेगा। जिसने आत्मा जाना, उसमें दृष्टि लगाकर एकाकार हुआ, वह पूर्णानन्द रूपी निर्वाण को पायेगा।[४] आत्मा को आत्मा माने तो मुक्ति और आत्मा को पररूप जाने तो संसार भ्रमण; पुण्य-पाप के विकल्प रहित वस्तु - ऐसा भगवान आत्मा, उसे जाना कि बस....।[५]''

इन दोहों का भाव स्पष्ट करते हुये ब्र. शीतलप्रसादजी लिखते हैं -

''आत्मा वास्तव में अनुभवगम्य है। मन में इसका यथार्थ चिन्तवन नहीं हो सकता; वचनों से इसका वर्णन नहीं हो सकता, शरीर से इसका स्पर्श नहीं हो सकता, क्योंकि मन का काम क्रम से किसी स्वरूप का विचार करना है। वचनों से एक ही गुण या स्वभाव एक साथ कहा जा सकता

१. योगसार प्रवचन पृष्ठ-१६ २. वही, पृष्ठ-१७ ३. वही, पृष्ठ-१७
४. वही, पृष्ठ-१८-१९ ५. वही, पृष्ठ-१९

है। शरीर मूर्तिक स्थूल द्रव्य को ही स्पर्श कर सकता है, जबकि आत्मा अनन्तगुण व पर्यायों का अखण्ड पिंड है। केवल अनुभव में ही इसका स्वरूप आ सकता है। वचनों से मात्र संकेत रूप से कहा जाता है। मन के द्वारा क्रम से ही विचारा जा सकता है। इसलिए यह उपदेश है कि पहले शास्त्रों के द्वारा या यथार्थ गुरु के उपदेश से आत्मा द्रव्य के गुण व पर्यायों को समझ ले, उसके शुद्ध स्वभाव को भी जाने तथा पर के संयोग जनित अशुद्ध स्वभाव को भी जाने अर्थात् द्रव्यार्थिकनय तथा पर्यायार्थिकनय से या निश्चयनय तथा व्यवहारनय से आत्मा को भले प्रकार जानें।[१]

इस आत्मा का संबंध किसी परवस्तु से नहीं है। यह आत्मा अपने ही ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य आदि गुणों का स्वामी है। इसका धन इसकी गुण सम्पदा है, इसका निवास या घर इसी का स्वभाव है। इस आत्मा का भोजन पान आदिक आनन्द अमृत है। आत्मा में ही सम्यग्दर्शन है, आत्मा में ही सम्यग्ज्ञान है, आत्मा में ही सम्यक्चारित्र है, आत्मा में ही सम्यक्तप है, आत्मा में ही संयम है, आत्मा में ही त्याग है, आत्मा में ही संवर तत्त्व है, आत्मा में ही निर्जरा है, आत्मा में ही मोक्ष है। जिसने अपने उपयोग को आत्मा में जोड़ दिया उसने मोक्षमार्ग पा लिया।[२]

इसप्रकार हम देखते हैं कि इन तीनों गाथाओं में एक ही बात कही गई है कि जिनेन्द्र भगवान कहते हैं कि जो जीव देहादि पर पदार्थों को आत्मा मानते हैं, अपना मानते हैं; वे बहिरात्मा हैं और वे संसार में परिभ्रमण करते रहते हैं।

वे देहादि पदार्थ किसी भी स्थिति में आत्मा नहीं हो सकते, अपने नहीं हो सकते; इसलिये अपने आत्मा को आत्मा मानना ही सही है।

यदि तू आत्मा को आत्मा समझेगा तो संसार से पार हो जायेगा, मुक्ति प्राप्त करेगा, अन्यथा संसार में ही परिभ्रमण करता रहेगा।(क्रमशः)

१. योगसार टीका पृष्ठ-५५-५६, २. वही, पृष्ठ-५६

छहढाला प्रवचन

एकत्व भावना

शुभ-अशुभ करमफल जेते, भोगे जिय एकहि तेते।
सुत-दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी।।६।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की पांचवीं ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

इस संसार में शुभ या अशुभ जितने भी कर्मफल हैं, उन सभी को यह जीव स्वयं अकेला ही भोगता है, उसमें स्त्री, पुत्र आदि कोई सहभागी नहीं है, वे सब अपने-अपने स्वार्थ के सगे हैं।

संसार घूमने में या मुक्ति की साधना में यह जीव अकेला ही है। यह स्वयं अकेला ही अपने बन्ध या मोक्ष के परिणामों को करता है - ऐसा जानता हुआ सम्यग्दृष्टि जीव सदा निज शुद्धात्मा में एकत्वरूप से परिणमता हुआ शुद्धात्मा की साधना करता है - यही परमार्थ एकत्व भावना है।

अत्यन्त निकटवर्ती शरीर के साथ भी इस जीव का एकत्व संबंध नहीं है तो अन्य बाह्य पदार्थों की क्या बात कहें ? अन्तर में भी चैतन्यस्वरूप उपयोग और रागादि विकारी भावों में एकता नहीं; अपितु भिन्नता है। इसप्रकार परद्रव्यों और परभावों से विभक्त आत्मा का अपने ज्ञायकभाव के साथ एकत्व है - ऐसा एकत्व-विभक्तपना जाननेवाला धर्मी जीव अपने सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र में एकत्वरूप से परिणमता हुआ स्वसमय में स्थिर होता है।

भगवान कुन्दकुन्दाचार्यदेव समयसार की पाँचवीं गाथा में ऐसे एकत्व-विभक्तस्वरूप आत्मा को दिखाने की प्रतिज्ञा करते हुए कहते हैं -

निज विभव में एकत्व ही, दिखला रहा करना मनन।
पर नहीं करना छल ग्रहण, यदि हो कहीं कुछ स्खलन।।

मैं स्वानुभवपूर्वक अपने आत्मा के समस्त वैभव से एकत्व-विभक्तरूप शुद्धज्ञायक आत्मा दिखाता हूँ। जैसा मैं दिखाता हूँ, वैसा स्वयं स्वानुभव से प्रमाण करना।

एक ज्ञायकस्वभावी शुद्धात्मा में राग का एक कण भी नहीं समाता। राग का रस भी रहे और ज्ञायक आत्मा का अनुभव भी हो जाये - ऐसा कभी नहीं होता।

ज्ञानी अपने आत्मा को कैसा अनुभव करते हैं - इसका वर्णन करते हुए पण्डित बनारसीदासजी ने नाटक समयसार में लिखा है -

कहें विचक्षण पुरुष सदा मैं एक हूँ,
अपने रस सों भर्यो अनादि टेक हूँ।
मोह करम मम नाहिं, नाहिं भ्रमकूप है,
शुद्ध चेतना सिन्धु हमारो रूप है।।

शुद्धचेतना के समुद्र में विभाव नहीं समाते। मैं सदा अपने चैतन्य-स्वभावरूप एक हूँ।

आचार्य कुन्दकुन्ददेव समयसार में लिखते हैं -

मैं एक दर्शन-ज्ञानमय नित शुद्ध हूँ रूपी नहीं।
ये अन्य सब परद्रव्य किंचित् मात्र भी मेरे नहीं।।३८।।

मैं एक हूँ अर्थात् शुद्ध हूँ; शुद्ध हूँ अर्थात् स्वभाव से पूर्ण हूँ; एकत्व में दूसरे से संबंध नहीं, शुद्धता में अशुद्धता नहीं और पूर्णता में अन्य पदार्थ का परमाणु मात्र का प्रवेश नहीं - इसप्रकार धर्मीजीव अपने एकत्व-स्वभाव का अनुभव करते हैं।

देखो, यह ज्ञानी की एकत्व भावना। ऐसी भावना वैराग्य को उत्पन्न

करनेवाली माता है, आनन्द की जननी है। मुनिराज और तीर्थंकर भी दीक्षा के प्रसंग में ये बारह भावनायें भाते हैं। अनेक बड़े-बड़े ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक इन वैराग्य भावनाओं का वर्णन किया गया है। प्रत्येक जीव को ये भावनाएं भानी चाहिए। ये प्रत्येक प्रसंग में जीव को शान्ति प्रदान करती हैं।

यहाँ एकत्व भावना में कहते हैं कि हे भाई ! इस संसार में या मोक्षमार्ग में जीव अकेला अपने दु:ख या सुख का वेदन करता है। रागादि से भिन्न आत्मा के एकत्वस्वभाव की भावना में जीव स्वयं अपने में अकेला ही सुख का वेदन करता है और रोग के समय मोह के उदय से दु:खी होता हो, तब भी स्वयं अकेला ही उस पीड़ा को भोगता है। कुटुम्बीजन पास में खड़े-खड़े देखते रहें, परन्तु उस पीड़ा में सहभागी नहीं हो सकते।

एक लुटेरा जंगल में एक संघ को लूट रहा था, तब संघ में रहनेवाले एक महात्मा ने कहा कि हे भाई ! तू यह लूटपाट करता है, परन्तु मेरी एक बात सुन ! जरा घर जाकर उनसे यह बात पूछ कर आ कि तुम सब यह धन भोगने में तो मेरे हिस्सेदार होते हो; परन्तु इस लूटपाट से बँधनेवाले पाप का फल भोगते समय नरकगति के दु:ख में भी मेरे सहभागी बनोगे ?

उस लुटेरे ने घर जाकर अपने कुटुम्बियों से उक्त प्रश्न पूछा; परन्तु पाप या दु:ख में हिस्सा बाँटने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ। तब महात्मा ने समझाया-

''सुन भाई ! यह जीव स्वयं अकेला ही पुण्य-पाप भावों को करता है और अकेला ही उनका फल भोगता है, दूसरा कोई उसमें सहभागी नहीं हो सकता, इसलिए तू पाप छोड़कर अपने भविष्य को सुधार।''

यह सुनकर उस लुटेरे को वैराग्य आ गया और वह अपना एकत्व-स्वरूप समझकर पापमार्ग छोड़कर हित के मार्ग में लग गया।

देखो ! जन्म से मरण तक सदा जीव के साथ-साथ (एक क्षेत्र में) रहने वाला यह शरीर भी जीव को सुख-दु:ख में साथ नहीं देता। जिसके पोषण के लिए अज्ञानी जीवनभर पाप करता है, वह शरीर भी पाप का फल भोगने

के लिए जीव के साथ नरक नहीं जाता और जीव मोक्ष में जाये तो वहाँ भी शरीर साथ नहीं जा सकता।

जब निकटवर्ती शरीर की ही यह स्थिति है, तो स्त्री-पुत्र-धन आदि तो प्रत्यक्ष भिन्न हैं, क्षेत्र से भी दूर हैं, वे सुख-दु:ख में भागीदार कैसे हो सकते हैं? आपस में चाहे जितना प्रेम हो; परन्तु कोई एक-दूसरे का दर्द नहीं बांट सकता। एकत्व भावना का वर्णन करते हुए श्रीमद् राजचन्द्रजी लिखते हैं-

शरीर मां व्याधि प्रत्यक्ष थाय, ते कोई अन्ये लई न शकाय।
ते भोगवे एक स्व-आत्म पोते, एकत्व सभी नय सुज्ञ गोते।।

दूसरे के लिए मैं जो पुण्य-पाप करूँगा, उसका फल मुझे अकेले ही भोगना पड़ेगा, इनमें मुझे किंचित् भी सुख नहीं है। परद्रव्यों से भिन्न मेरे एकत्वस्वभाव में ही सुख है - ऐसा विचार कर हे जीव ! तू अपने स्वभाव की भावना कर। मैं दूसरों को सुखी-दु:खी कर दूँ या दूसरे मुझे सुखी-दु:खी कर दें - ऐसी पराश्रित बुद्धि छोड़। वास्तव में कोई जीव दूसरों के लिए कुछ नहीं करता। अपने भाव में जो उसे अच्छा लगता है, वही करता है।

इसप्रकार जगत का प्रत्येक पदार्थ, चाहे वह जीव हो या अजीव, अपने-अपने एकत्व में वर्त रहा है। सभी अपने-अपने गुण-पर्यायरूप स्वभाव में रहते हैं, ऐसा एकत्व, वस्तु का स्वरूप है। ज्ञानी इसका चिन्तवन करते हैं। **(क्रमश:)**

वीतरागी परमात्मा का उपासक तो वीतरागता का ही उपासक होता है। लौकिक सुख (भोग) की आकांक्षा से परमात्मा की उपासना करने वाला व्यक्ति वीतरागी-सर्वज्ञ भगवान का उपासक नहीं हो सकता। वस्तुत: वह भगवान का उपासक न होकर भोगों का उपासक है।

सच्ची भक्ति के समय चित्त इतना दीन नहीं रह सकता कि वह कुछ मांग करे। मांगने वाले के मन में भक्ति ठहर ही नहीं सकती। वीतराग की भक्ति में तो मांगना संभव ही नहीं, वीतराग का भक्त तो कुछ मांग ही नहीं सकता। जो मांगे वह वीतराग का भक्त है ही नहीं।

- चिंतन की गहराईयाँ, पृष्ठ 6

नियमसार प्रवचन -

आर्त और रौद्र ध्यान छोड़ने योग्य है

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ८९ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथा मूलत: इसप्रकार हैं -

मोत्तूण अट्टरुद्दं झाणं जो झादि धम्मसुक्कं वा।
सो पडिकमणं उच्चइ जिणवरणिद्दिट्ठसुत्तेसु।।८९।।

(हरिगीत)

तज आर्त एवं रौद्र ध्यावे धरम एवं शुकल को।
परमार्थ से वह प्रतिक्रमण यह कहा जिनवर सूत्र में।।८९।।

जो जीव आर्त और रौद्र - इन दो ध्यानों को छोड़कर धर्म या शुक्ल - ध्यान को ध्याता है; वह जीव जिनवरकथित सूत्रों में प्रतिक्रमण कहा जाता है।

(गतांक से आगे....)

यह ध्यान के भेदों के स्वरूप का कथन है।

(१) कुटुम्बीजनों के वियोग प्रसंग तथा अन्य प्रतिकूल प्रसंगों के होने पर चिन्ता का परिणाम आर्त्तध्यान है।

जिसप्रकार घानी में तिल पेला जाता है, उसीप्रकार भगवान आत्मा वीतरागी सामर्थ्यवाला होने पर भी यदि विपरीत ध्यान करे तो अशान्ति से पीड़ित होता है। वह कितने कारणों से पीड़ित होता है, सो बतलाते हैं। यदि अपना देशनिकाला हो जावे तो चिन्ता होती है कि हाय! कुटुम्बीजनों का क्या होगा? लोकवाणी से प्रेरित होकर रामचन्द्रजी ने सीता को सघन वन में छुड़वा दिया, सीताजी वन में अकेली थीं तथा सगर्भा थीं। उससमय उन्होंने सारथी द्वारा रामचन्द्रजी से कहलवा दिया कि 'जिसप्रकार लोकलाज

की वजह से आपने मुझे छोड़ दिया; उसप्रकार लोकलाज की वजह से धर्म को मत छोड़ देना।' देखो, सीताजी ज्ञानी थी। वन में स्वदेश त्याग के प्रसंग पर आँखों से आँसू आते हैं, आर्तध्यान भी होता है; परन्तु आत्मभान होने के कारण उस शोक को उन्होंने अपना स्वरूप नहीं माना।

अंजना सती को भी अकेले गुफा में रहना पड़ा, उनके चक्षुओं से अश्रुधारा भी प्रवाहित हुई, आर्तध्यान भी हुआ; परन्तु उसीसमय आत्मभान भी बराबर बना हुआ था। उन्हें आत्मा का भान था अर्थात् मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण था; किन्तु अव्रत का प्रतिक्रमण नहीं था। यहाँ तो अस्थिरता का भाव भी छोड़कर स्वभाव से स्थिर रहनेवाले मुनि के प्रतिक्रमण की बात है, इसलिए 'आर्तध्यान छोड़कर' - ऐसा कहा है।

पुनश्च व्यापारादि में हानि हो जाय, उस प्रसंग पर अपने कारण से होने वाला शोक का परिणाम आर्तध्यान है। पुत्र परदेश में हो, तब घर के मनुष्यों को चिन्ता के परिणाम हों, सुन्दर स्त्री के वियोग से चिन्ता हो, घर में पत्नी प्रतिकूल वर्तन करे, दुकान अच्छी न चले, पुत्र-पुत्री भी आज्ञापालक न हों - ऐसे प्रसंगों पर आर्तध्यान होता है। यद्यपि उन प्रसंगों के कारण आर्तध्यान नहीं होता; फिर भी उस काल में आर्तध्यान - चिन्ता के परिणाम देखने में आते हैं, वे सब अपनी निर्बलता के कारण ही होते हैं।

(२) दूसरे को मारने, बाँधने आदि के क्रूर परिणाम रौद्रध्यान हैं।

आर्तध्यान की अपेक्षा यह अधिक दुष्ट परिणाम है। चोर को रौद्रध्यान का परिणाम होता है, क्योंकि अपनी चोरी छिपाने के लिए दूसरे को मारने का भाव करता है, अपने को दण्ड देनेवाले के प्रति मारने के भाव होते हैं। व्यभिचारी जीव को भी अपने से प्रतिकूल वर्त्तनवाले जीव को मारने के भाव होते हैं। अपने से प्रतिकूल चलनेवाले शत्रु के ऊपर द्वेषभाव होता है, यह सब रौद्रध्यान है और इससे नरकायु का बन्ध होता है।

आर्त और रौद्रध्यान से स्वर्गसुख भी नहीं मिलता - ये दोनों संसारदुःख के मूल हैं, अतः सर्वथा त्याज्य हैं।

आर्त और रौद्र - दोनों ध्यान संसार दुःख के मूल हैं। स्वर्ग और मोक्ष के अपरिमित सुख के प्रतिपक्षी हैं। इन ध्यानों से मोक्ष का सुख तो मिलता ही नहीं; किन्तु स्वर्ग का सुख भी नहीं मिलता। यहाँ इन ध्यानों के फल में नरक का दुःख बतलाना है। स्वर्ग में देवगण लौकिकसुख भोगते हैं। लोग उन्हें सुखी मानते हैं, स्वर्ग के उस सुख को लम्बे समय तक भोगते रहने के कारण अपरिमित सुख कह दिया है, वास्तव में वहाँ सुख है नहीं। यह कथन तो भेद बतलाने के लिए कर दिया है। दया, दान, व्रत, तप करनेवाला ब्रह्मचारी हो और मुनि होकर तपश्चर्या करे तो स्वर्ग में जाता है। भले उसे आत्मा का भान न हो, तथापि कषाय की मंदता के कारण स्वर्ग में उत्पन्न होता है और असंख्य वर्षों तक वहाँ रहता है। देवों की आयु सागरोपम की होने से लौकिक में उन्हें अमर कहते हैं। आर्त-रौद्रध्यान वाला देवों के भव को प्राप्त नहीं कर पाता; अपितु नरक में जाता है।

नरक में जघन्य से जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष होती है और उत्कृष्ट से उत्कृष्ट स्थिति तैंतीस सागरोपम होती है। वहाँ असह्य वेदना भोगनी पड़ती है। वह दुःख रुदन करने पर भी छूटता नहीं है। आर्त-रौद्रध्यान का फल अति कष्टदायक है; फिर भी जिसे वे अच्छे लगें, वह उन्हें कैसे छोड़ें? अतः यहाँ तो स्वरूप बतलाया है कि दुर्ध्यान से मोक्ष मिलना तो दूर ही रहा, स्वर्ग भी नहीं मिलता। इसप्रकार समझ ले तो पुण्य-पाप करने का उत्साह भंग होकर स्वभाव की प्राप्ति का उत्साह उत्पन्न हो जाय।

रौद्रध्यान पंचम गुणस्थान तक तथा आर्तध्यान छठवें गुणस्थान तक पाया जाता है। यह जितना भी है, वह सब बंध का कारण है, संसार दुःख का मूल है; अतः सर्वथा त्याज्य ही है। **(क्रमशः)**

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

ज्ञान शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे....)

जाननपर्याय में अज्ञानी को भी स्वद्रव्य जानने में आता है; परन्तु उसकी दृष्टि स्वद्रव्य पर नहीं होती, उसकी दृष्टि तो पर्याय और राग पर ही रहती है। इसकारण शास्त्र पढ़ने पर भी अज्ञानी को ज्ञानलाभ नहीं होता।

साकार-उपयोगमयी ज्ञानशक्ति है, **'उपयोगवाली' ऐसा न कहकर 'उपयोगमयी' ऐसा कहा – इससे उपयोग का ज्ञानगुण के साथ अभेद सिद्ध किया है।** जो उपयोग ज्ञानस्वभावी स्वद्रव्य में एकाकार अभेद होकर प्रवर्तता है, उससे ही हम अपना उपयोग कहते हैं।

जो उपयोग बाहर में/परद्रव्य में/रागादि में तन्मय होकर प्रवर्तता है, उसे आत्मा का/अपना उपयोग नहीं कहते। बाहर के उपयोग में आत्मा जानने में नहीं आता, वह तो अहितरूप दुःख की दशा है।

भाई! जो उपयोग निजस्वरूप में एकाकार-अभेद होकर प्रवर्तता है, वही हितरूप दशा है, वही मोक्षमार्ग है।

ज्ञानशक्ति त्रिकाल पारिणामिकभावरूप है, यह तब जाना कहलायेगा, जब अन्तर्मुख ज्ञान में उसका प्रतिभास होगा।

अरे भाई! अन्तर-एकाग्रता से निश्चय किये बिना 'यह है' ऐसी बात ही कहाँ रही? भाई! ऐसा अतिसूक्ष्म वस्तु का स्वरूप अभी नहीं समझेगा तो कब समझेगा?

अहा! **जानना ज्ञान का स्वभाव है। जिसप्रकार ज्ञान स्वद्रव्य को जानता है; उसीप्रकार पुद्गलादि परद्रव्यों को भी जानता है। एक समय की पर्याय में विकार है, उसे भी ज्ञान जानता है; जानने मात्र से ज्ञान पुद्गलादि परद्रव्यरूप या रागरूप नहीं हो जाता अर्थात् ज्ञान उन परद्रव्यों का या राग का कर्ता नहीं होता। – यह वस्तुस्थिति है। अनादि से यह जीव इस वस्तुस्थिति को नहीं मानने के कारण ही अज्ञानी है।**

ज्ञान स्वद्रव्य को और उसके अनन्तगुणों को भिन्न-भिन्न जानता तो है; पर अनन्तगुणों रूप नहीं होता। यदि हो जाये तो ज्ञान ही नहीं रहे और ज्ञान का अभाव होने पर तो द्रव्य का ही अभाव हो जायेगा; परन्तु ऐसा तो कभी होता नहीं है।

द्रव्य में रहनेवाला एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता; क्योंकि ऐसी वस्तुस्थिति ही नहीं है। फिर भी अनन्तगुण द्रव्य में अभेदरूप से रहते हैं, व्यापक हैं। ऐसे अभेद की दृष्टि में आनन्द का स्वाद आता है। इसका नाम धर्म है। इसकी लोगों को खबर नहीं है, इसलिए उन्हें यह एकान्त जैसा लगता है; परन्तु यह एकान्त नहीं, सम्यक्-अनेकान्त है। तू सुन तो सही, अरे! यह अलौकिक बात महाभाग्य से सुनने को मिलती है।

यह ज्ञानशक्ति द्रव्य की अनन्तशक्तियों में व्याप्त हैं। शक्ति कहो या गुण कहो – दोनों का एक ही अर्थ है। प्रत्येक गुण समस्त – अनन्तगुणों में और अनन्तगुणमय द्रव्य में व्याप्त है।

तात्पर्य यह है कि यह ज्ञानशक्ति द्रव्य में व्याप्त है, गुणों में व्याप्त है और एक-अभेद त्रिकाली-द्रव्य की दृष्टि होने पर पर्याय में भी व्याप्त हो जाती है तथा राग से भिन्न हो जाती है; क्योंकि अभेद की दृष्टि में राग व्याप्त नहीं होता।

पहले पर्याय में राग तथा मिथ्यात्वादि थे, तब संसार उछलता था और अब 'मैं ज्ञानस्वभावी हूँ' – ऐसी द्रव्यदृष्टि हुई तो पर्याय में आनन्द उछलता

है, अनन्तगुणों की निर्मलपर्याय प्रगट होती है।

अतीन्द्रिय ज्ञान और आनन्द प्रगट होने पर परद्रव्य में से मेरा ज्ञान-आनन्द आता है - ऐसे मिथ्या अभिप्राय का तो नाश हो जाता है और ज्ञान की निर्मलधारा का क्रम प्रारंभ हो जाता है। ऐसी द्रव्यदृष्टि कोई अलौकिक चीज है।

यह ज्ञानशक्ति द्रव्य-गुण-पर्याय - तीनों में व्याप्त है। इसमें त्रिकाली ध्रुव ज्ञानशक्ति ध्रुव-उपादान है और उसका पर्याय में जो ज्ञानोपयोग-रूप परिणमन है, वह क्षणिक उपादान है।

जहाँ ज्ञानशक्ति का स्वाश्रित परिणमन होता है, वहाँ यह अपने निजद्रव्य को जानता है, अपने अनन्तगुणों को जानता है और अपनी निर्मल परिणति को भी जानता है। उस समय जो अतीन्द्रिय-आनन्द का वेदन होता है, उसे भी जानता है। ऐसा अनेकान्त है।

व्यवहार/राग से भी धर्म होता है और निश्चय से भी धर्म होता है - ऐसा अनेकान्त नहीं है।

यह शक्ति का प्रकरण चलता है। इसमें त्रिकाली गुण हैं और उसको धारण करनेवाला त्रिकाली द्रव्य गुणी है। उस त्रिकालीद्रव्य के सम्मुख दृष्टि होने पर क्रमशः निर्मल परिणमन होता है और विकारी परिणमन बन्द हो जाता है।

अरे भाई! **शक्ति और शक्ति के परिणमन में विकार का सदा ही अभाव है;** क्योंकि **आत्मद्रव्य में ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जो विकार को कर सके।**

व्यवहाररत्नत्रय का राग होना आत्मा की शक्ति का कार्य नहीं है; क्योंकि निर्मल ज्ञानानन्दमय परिणमन में व्यवहाररत्नत्रय का अभाव ही है। - यह अनेकान्त है। ऐसा मार्ग दिगम्बर सन्तों ने खोल दिया है।

अतः 'मुझे समझ में नहीं आता' यह मत सोच! 'तुझे समझ में

आयेगी' - संतों ने ऐसा जानकर ही यह बात की है। भाई! जिज्ञासापूर्वक ध्यान देकर इसे समझे तो आत्मज्ञान हो जाय - यह ऐसी बात है।

अहा! प्यास लगी हो तो घर में बंधे बड़े-बड़े हाथी, घोड़ों को नहीं कहते कि 'पानी लाओ'; परन्तु जिसमें समझ-शक्ति है - ऐसे आठ वर्ष के छोटे बालक को कहते हैं।

वैसे ही आचार्यदेव ने जिसमें समझ-शक्ति है; जो जानने के स्वभाववाला है, उससे ही कहा है कि - तू जान। आचार्यदेव कहीं जड़-शरीर या राग से नहीं कहते कि तू आत्मा को जान!

अहो! साकार-उपयोगमयी ज्ञानशक्ति में आचार्यदेव ने कितना तत्त्व भर दिया है? शक्ति में तन्मय/व्यापक होकर प्रगट हुई क्रमवर्ती ज्ञानपर्याय के कर्ता, कर्म आदि षट्कारक स्वाधीन हैं। पर या राग में नहीं हैं, ज्ञान के कारक ज्ञान में ही हैं।

ज्ञान में षट्कारकरूप शक्तियाँ नहीं हैं, परन्तु उनका रूप है। इसलिये ज्ञान स्वयं ही कर्ता होकर, साधन होकर अपने में स्वतंत्र ज्ञान का कर्म करता है, उसे पर या राग की अपेक्षा नहीं है।

जो पैसा और प्रतिष्ठा प्राप्त करने में रुक गया हो, विषयों में रुक गया हो, उसे ऐसी बात कैसे समझ में आवे? परन्तु भाई! ये सब तो मिट्टी-धूल हैं, इनमें सुखगुण कहाँ है, जो इनमें से सुख मिले? उनमें से सुख मिलेगा - ऐसा तीन काल में भी संभव नहीं है।

सुख तो तेरे आत्मा का स्वभाव है, उसमें ही ठहर जा तो तुझे अवश्य ही सुख प्राप्त होगा।

अहा! **स्व-स्वरूप में तन्मय ज्ञानपर्याय स्वयं को जानती हुई जब प्रगट हुई तो वह उसका जन्मक्षण है।** उस ज्ञानपर्याय के उत्पन्न होने का समय था, सो ज्ञान का उत्पाद हुआ, उस उत्पाद को पूर्वपर्याय और त्रिकाली

ध्रुवद्रव्य की अपेक्षा नहीं है।

जरा सूक्ष्म बात है भाई! **ज्ञानपर्याय ध्रुव के सन्मुख होकर ध्रुव को जानती है; परन्तु उसे ध्रुव की अपेक्षा नहीं है। वह पर्याय स्वयं ही कारण है और स्वयं ही कार्य है।** जब ऐसी वस्तुस्थिति है तब पर, व्यवहार अथवा देव-शास्त्र-गुरु से कल्याण हो जायेगा - यह बात ही कहाँ रही?

अहा! ऐसी साकार-उपयोगमयी आत्मा की एक असाधारण ज्ञानशक्ति है, जो ज्ञानमात्र भाव में उछलती है और उसी समय श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र-आनन्द आदि अनन्तशक्तियाँ साथ ही उछलती हैं, जो आत्मा को आनन्ददायक होती हैं।

अहा! ऐसे ज्ञानस्वभावी आत्मा के सन्मुख होकर अन्दर में प्रतीति करना सम्यग्दर्शन है, धर्म है।

इस तरह चौथी साकार-उपयोगमयी ज्ञानशक्ति पूर्ण हुई। **(क्रमशः)**

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

13 से 20 अक्टूबर	जयपुर	शिक्षण शिविर
25 से 29 अक्टूबर	देवलाली	दीपावली
1 से 3 नवम्बर	इन्दौर (ढाईद्वीप)	वेदी शिलान्यास
4 से 11 नवम्बर	कलकत्ता	अष्टाह्निका महापर्व

बाह्यक्रिया पर तो इनकी दृष्टि है और परिणाम सुधरने-बिगड़ने का विचार नहीं है। और यदि परिणामों का भी विचार हो तो जैसे अपने परिणाम होते दिखायी दें उन्हीं पर दृष्टि रहती है, परन्तु उन परिणामों की परम्परा का विचार करने पर अभिप्राय में जो वासना है उसका विचार नहीं करते। और फल लगता है सो अभिप्राय में जो वासना है उसका लगता है।... **– मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 238**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : सच्चे देव-शास्त्र-गुरु को मानने से तो सम्यग्दर्शन हो जायेगा न?

उत्तर : जब सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की पहिचान कर उनके लिये तन-मन-धन अर्पण करने की भावना आ जाये और जब उसे आत्मा की ऐसी श्रद्धा हो जाये कि देव-गुरु के प्रति होनेवाला राग भी पुण्यबंध का कारण है। वह आत्मा का स्वरूप नहीं है; तब अगृहीत मिथ्यात्व भी छूट जाता है। अनादि के अगृहीत मिथ्यात्व के छूटने पर ही जिनेन्द्र भगवान का सच्चा भक्त होता है, सच्चा जैनपना प्रगट होता है।

प्रश्न : आप कहते हैं कि शुभभाव से धर्म नहीं होता; इसलिये हमें देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति का उत्साह नहीं आता ?

उत्तर : यह ठीक है कि शुभराग से धर्म नहीं होता; किन्तु यह कहाँ कहा है कि शुभराग को छोड़कर अशुभराग करो ? फिर तू स्त्री-पुत्र लक्ष्मी आदि के अशुभराग में रत क्यों रहता है ? इससे सिद्ध होता है कि तुझे निमित्त की परीक्षा करना नहीं आता। जिसे निमित्त की परीक्षा का भान नहीं है, वह अपने उपादान स्वरूप को कैसे पहिचानेगा? भगवान अरहंतदेव, सत्शास्त्र और नग्न दिगम्बर भावलिंगी सद्गुरु अपने सत्स्वरूप को समझने में निमित्त हैं।

प्रश्न : आप तो व्यवहार को हेय कहते हैं, फिर अरहंतादि की भक्ति का उपदेश क्यों देते हैं ?

उत्तर : जो यह तो जानता नहीं कि निश्चय क्या है एवं व्यवहार क्या है ? और व्यवहार शुद्धि के बिना मात्र निश्चयनय की ही बातें करता है,

उसे निश्चयनय नहीं होता। जिसे सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के लिये तन-मन-धन अर्पण करने का भाव आता है, वह व्यवहार से अरहंतादि का भक्त है। प्रशस्त शुभराग होने पर गृहीत मिथ्यात्व छूटता है और अन्तर्स्वभाव के बल से शुभराग से अपने को भिन्न जानकर शुद्धस्वभाव की श्रद्धा करने पर निश्चयसम्यक्त्व होता है।

प्रश्न : भगवान की व्यवहारभक्ति और निश्चयभक्ति का क्या स्वरूप है?

उत्तर : जिसे सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की पहिचान होती है तथा उनके लिये सर्वस्व समर्पण का भाव होता है, वह व्यवहार से भगवान का भक्त कहलाता है। भगवान का व्यवहार भक्त वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु को छोड़कर कुगुरु-कुदेव आदि का समर्थन नहीं करता। सत्यमार्ग एक ही होता है, तीन लोक एवं तीन काल में भी सत्यमार्ग दो नहीं होते।

वीतराग देव के अतिरिक्त अन्य देव को सच्चा माननेवाला वीतराग का भक्त नहीं है। सर्वज्ञदेव और कुदेवादि एक समान नहीं होते - ऐसी श्रद्धा होने पर सर्वज्ञ की व्यवहार श्रद्धा कहलाती है। कुछ लोग जैनधर्म व अन्य धर्मों का समन्वय करना चाहते हैं, किन्तु जैनधर्म व अन्यधर्मों का समन्वय कभी नहीं हो सकता। वीतराग के बाह्य या अंतरंग स्वरूप को अन्यथा माननेवाला भगवान का व्यवहार भक्त भी नहीं है।

जो सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की व्यवहारश्रद्धापूर्वक आनन्दघनस्वरूप निज आत्मा की श्रद्धा के बल से यह निर्णय करता है कि परपदार्थों के साथ मेरा कोई संबंध नहीं है, देव-शास्त्र-गुरु संबंधी शुभराग भी मेरा स्वरूप नहीं है, मैं अखण्ड ज्ञायक हूँ; वही भगवान का निश्चय भक्त है। जिसे निश्चय भक्ति होती है, उसे व्यवहार भक्ति अवश्य होती है तथा उसे सच्चे देव-गुरु-धर्म के लिये उत्साहपूर्वक तन-मन-धन खर्च करने का भाव भी आये बिना नहीं रहता।

प्रश्न : भगवान तो वीतरागी हैं, वे धन का क्या करेंगे ?

उत्तर : भाई ! तुझे भगवान को कहाँ धन देना है ? भगवान के लिये कुछ नहीं करना है; किन्तु वीतरागता की रुचि बढ़ाकर देव-गुरु की प्रभावना के लिये खर्च करके तृष्णा कम करने के लिये कहा जाता है। यदि तुझे सत् की रुचि है, तो यह देख की अन्य साधर्मियों को किस बात की प्रतिकूलता है ? और यदि किसी को शास्त्र आदि की आवश्यकता है तो उसकी पूर्ति के लिये अपने पद के अनुसार हिस्सा दे।

प्रश्न : ज्ञानी जीव भी भगवान के समक्ष भक्ति करते समय बोलते हैं कि हे नाथ ! भव-भव में आपका शरण प्राप्त हो। यदि भगवान का शरण न होता तो ज्ञानी जीव ऐसा कैसे बोलते ?

उत्तर : भव-भव में भगवान का शरण प्राप्त हो – यह मात्र निमित्त के तरफ की भाषा है, ज्ञानी इस भाषा का कर्त्ता नहीं है। इस भाषा के समय ज्ञानी के अन्तर में ऐसा अभिप्राय होता है कि रागरहित चिदानन्द मेरा स्वरूप है। ऐसी श्रद्धा-ज्ञान के होने पर भी अभी पर्याय में राग है; अत: जबतक यह राग समाप्त न हो, तबतक अशुभराग तो हमें होवे ही नहीं और वीतरागता के निमित्त के प्रति ही लक्ष हो, वीतरागता का ही बहुमान हो, शुभराग टूटकर अशुभराग तो आवे ही नहीं। अब शुभराग लम्बे समय तक तो टिक नहीं सकता, अल्पकाल में ही वह पलटकर या तो वीतरागभावरूप हो जायेगा या अशुभभावरूप हो जायेगा।

वीतराग का ही शरण हो – इसमें ज्ञानी की ऐसी भावना है कि यह शुभ टूटकर अशुभ न हो, अपितु अशुभ टूटकर वीतरागता ही हो। वीतराग के बहुमान का राग हुआ, उस समय भी लक्ष तो वीतराग की तरफ होता है; परन्तु वीतराग भगवान मुक्ति के दाता नहीं हैं, मैं अपनी शक्ति से ही राग तोड़कर भगवान बनूँगा। यदि आत्मा में ही भगवान बनने की शक्ति न हो तो भगवान कुछ भी देने में समर्थ नहीं है और यदि आत्मा में ही भगवान बनने की शक्ति है, तो भगवान की अपेक्षा ही क्या ?

वीतराग भगवान की प्रार्थना के शुभराग से तीनकाल-तीनलोक में धर्म नहीं होता। जिसे अपने स्वत: शुद्धस्वभाव का भान नहीं; वह अपने लिये देव-शास्त्र-गुरु का सहारा चाहता है और ऐसी मान्यतावाले को आचार्यदेव जीव कहते ही नहीं, वह तो जड़ जैसा है – मूढ़ है, उसे चैतन्यतत्त्व का भान नहीं है। जैसे शरीर में फोड़ा निकला हो; उसे जो रोगरूप समझे, उसका ही ऑपरेशन होगा। उसीप्रकार जो जीव शुद्धचैतन्यस्वरूप को जाने तथा हिंसादि और दयादि के अशुभभावों से स्वरूप को भिन्न जाने, वही जीव विकारी भावों का अभाव करने पर प्रयत्न करके मुक्ति प्राप्त करेगा। जो अपने निरुपाधि शुद्धस्वरूप को पहचानेगा ही नहीं, वह जीव शुभाशुभभावों को छोड़ेगा नहीं और उसकी मुक्ति भी नहीं होगी। ●

अहा! इस राग के साथ एकत्व की बंधकथा विसंवाद करने वाली है, जीव का अत्यन्त अहित करने वाली है, अकथनीय दु:ख देने वाली है। राग विकल्प है – पुण्य का हो या पाप का; इसका करना और भोगना जीव को अत्यन्त दु:खदायक है; क्योंकि एकपने से विरुद्ध है। अरेरे! तो भी अनादिकाल से जीव ने इसी बात को अनंतबार सुना है। भगवान आत्मा ध्रुवचैतन्य और आनन्दस्वरूप है। इन्द्रियों की ओर झुकने का भाव कामभोग सम्बन्धी कथा है – मात्र दु:ख की कथा है। यह पहले अनंतबार सुनने में आयी है, परिचय में आयी है और अनुभव में भी आयी है। राग से भिन्न भगवान ध्रुव त्रिकाली का लक्ष्य व वेदन होना चाहिए, वह वेदन कभी आया नहीं है।

प्रवचनरत्नाकर भाग-1, पृष्ठ 69

समाचार दर्शन -

दशलक्षण महापर्व सानन्द संपन्न

सार्वभौमिक एवं त्रैकालिक दशलक्षण महापर्व सम्पूर्ण देश-विदेश में दिनांक 3 सितम्बर से 12 सितम्बर तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। पर्व के दौरान सभी स्थानों पर मंदिरों में पूजन-विधान, प्रवचन, प्रौढ़ एवं बालकक्षाओं की धूम रही। लगभग सभी स्थानों पर सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति एवं रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से महती धर्म प्रभावना हुई। देश के कोने-कोने से प्राप्त समाचारों को यहाँ संक्षेप में प्रकाशित किया जा रहा है।

दिल्ली : यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर विश्वास नगर में श्री 1008 आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में प्रात: दशलक्षण मण्डल विधान के उपरान्त अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** द्वारा रात्रि में '**यही है ध्यान यही है योग**' विषय पर एवं पण्डित अच्युतकांतजी शास्त्री द्वारा दोनों समय समयसार (निर्जरा अधिकार) एवं दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित विवेकजी शास्त्री एवं पण्डित मयंकजी शास्त्री द्वारा संपन्न कराये गये।

विदिशा (म.प्र.) : यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर किला अन्दर स्थित बड़ा जैन मन्दिर में **ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना** द्वारा प्रात: दशलक्षण धर्म पर एवं रात्रि में निश्चय-व्यवहार नय विषय पर प्रवचनों का लाभ मिला। दोपहर में ब्रह्मचारिणी बहनों द्वारा महिलाओं की कक्षा एवं स्टेशन जैन मन्दिर में पण्डित चर्चितजी शास्त्री द्वारा मोक्षमार्ग प्रकाशक पर प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रि में पण्डित निखिलजी शास्त्री मुम्बई का भी समागम प्राप्त हुआ तथा युवा फैडरेशन द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम संपन्न हुये। **– मलूकचंद जैन**

अजमेर (राज.) : यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर श्री वीतराग विज्ञान स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के अन्तर्गत दोनों जिनालयों में **पण्डित प्रदीपजी झांझरी उज्जैन** द्वारा प्रात: नियमसार, ध्यान का स्वरूप एवं सायंकाल दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त ब्र. मनोरमाबेन उज्जैन के प्रवचन भी हुये। प्रात: दशलक्षण मंडल विधान, सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति एवं रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ। विधि विधान के समस्त कार्य पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल एवं पण्डित विवेकजी शास्त्री बण्डा द्वारा स्थानीय लोगों के सहयोग से कराये गये। **– प्रकाशचंद पाण्ड्या**

सम्मेदशिखरजी (झारखण्ड) : यहाँ महापर्व के अवसर पर प्रात: गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के उपरान्त **डॉ. शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर** द्वारा वन्दित्तु सव्वसिद्धे के आधार से देवदर्शन व पूजन-स्वरूप एवं रात्रि में 'पंच परमेष्ठी का स्वरूप' विषय पर प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त विदुषी प्रतीति पाटील जयपुर द्वारा दोपहर में तत्त्वार्थसूत्र एवं रात्रि में

दशलक्षण धर्म पर प्रवचन हुये; **पण्डित विमलदादा झांझरी उज्जैन** द्वारा नियमसार पर प्रवचन तथा ब्र. समता झांझरी उज्जैन व विदुषी पूजा शास्त्री लूणदा द्वारा भी एक-एक प्रवचन हुआ।

प्रात: दशलक्षण मंडल विधान का आयोजन पण्डित आयुषजी शास्त्री पिपरिया व राजकुमारजी बरगी द्वारा संपन्न हुआ। इसके अतिरिक्त सम्मेदशिखर विधान एवं रत्नत्रय विधान भी संपन्न हुये। सायंकाल सामायिक व जिनेन्द्र भक्ति एवं रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम श्री सुमतिलालजी लूणदिया व विदुषी प्रतीति पाटील द्वारा कराये गये। इस अवसर पर आयोजित इन्द्रसभा भी विशेष आकर्षण का केन्द्र रही। संपूर्ण कार्यक्रम में पण्डित आकाशजी शास्त्री अमायन का विशेष सहयोग रहा। **– चन्द्रप्रकाश जेतावत (प्रबंधक)**

अहमदाबाद-वस्त्रापुर (गुज.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर प्रतिदिन प्रात: दशलक्षण महामंडल विधान एवं गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के उपरान्त **डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर** द्वारा 'आत्मा की 47 शक्तियों' पर एवं सायंकाल समाज के विशेष आग्रह पर प्रोजेक्टर द्वारा डेढ घंटा 'तीन लोक' विषय पर मार्मिक चर्चा हुई। रात्रि में श्री चिरेनभाई एवं श्री सुहासभाई के निर्देशन में पाठशाला के बालकों द्वारा विशेष सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ।

पर्व के अवसर पर एक दिन **54वाँ श्री वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर अहमदाबाद (चैतन्यधाम) में लगाने का निर्णय लिया गया।** इस अवसर पर श्री अमृतभाई मेहता, श्री राजेशभाई जवेरी, श्री रमेशभाई शाह, श्री सेवन्तीभाई गांधी, श्री सुरेशभाई, श्री प्रकाशचंदजी सेमारी, श्री राजूभाई, श्री सतीशभाई, श्री निखिलभाई, श्री चिरेनभाई आदि सभी ट्रस्टी मण्डल एवं डॉ. संजीवजी गोधा, ऋषभजी शास्त्री, ध्रुवेशजी शास्त्री, स्वानुभवजी शास्त्री, रत्नेशजी शास्त्री, चैतन्यजी शास्त्री एवं करणजी शास्त्री की उपस्थिति में पूरे समाज को विशेष आमंत्रण दिया गया।

विधान का आयोजन रत्नेशजी, चिरेनभाई, स्वानुभवजी, चैतन्यजी द्वारा कराया गया। इसी प्रसंग पर प्रतिदिन संजीवजी गोधा द्वारा दशलक्षण धर्म पर विशेष चर्चा की गई।

ज्ञातव्य है कि दिनांक 13 सितम्बर को **श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, कोबा** में डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा विशेष रूप से दो प्रवचनों का लाभ मिला। साथ ही दिनांक 14 व 15 सितम्बर को **सोनगढ स्थित श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थी गृह** में तीनों समय 'अष्टकर्म', 'जैन गणित', 'हमारे महापुरुष' विषय पर प्रवचन हुये, साथ ही विद्यार्थियों की शंकाओं का आगम सम्मत समाधान भी किया गया। अन्त में पण्डित सोनूजी शास्त्री द्वारा संजीवजी गोधा का आभार व्यक्त किया गया।

कोलकाता : यहाँ महापर्व के अवसर पर पद्मपुकुर स्थित दिगम्बर जैन मन्दिर में **पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली** द्वारा स्वरचित तत्त्वार्थसूत्र मंडल विधान के उपरान्त प्रात: समयसार (कर्ताकर्माधिकार) एवं सायंकाल मोक्षमार्गप्रकाशक (9वाँ अधिकार) पर प्रवचनों

का लाभ मिला।

जयपुर-टोडरमल स्मारक भवन (राज.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर प्रात: दशलक्षण मंडल विधान के उपरान्त **पण्डित गौरवजी शास्त्री** द्वारा दशलक्षण धर्म एवं सायंकाल **पण्डित अरुणजी शास्त्री बण्ड** द्वारा समयसार (मोक्ष अधिकार) पर प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त दोपहर को **ब्र. कल्पनाबेन** द्वारा प्रौढ कक्षा, सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति, छात्र प्रवचन एवं रात्रि में प्रवचनोपरान्त उपाध्याय कनिष्ठ-वरिष्ठ के छात्रों व वीतराग-विज्ञान महिला मण्डल द्वारा ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ।

सुगन्ध दशमी के दिन अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन जयपुर महानगर, श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय एवं वीतराग-विज्ञान महिला मण्डल बापूनगर द्वारा **'ऐसे क्या पाप किये'** विषय पर आकर्षक व भव्य सजीव झांकी लगाई गई, जिसे जयपुर के **लगभग 2000 लोगों** ने देखा और उसकी भरपूर सराहना की। विधि-विधान के कार्य पण्डित गौरवजी शास्त्री ने विद्यार्थियों के सहयोग से संपन्न कराये।

उज्जैन (म.प्र.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर क्षीरसागर स्थित दिगम्बर जैन मन्दिर में **डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर** द्वारा प्रात: समयसार के आधार पर विभिन्न विषय, दोपहर में तत्त्वार्थसूत्र एवं सायंकाल दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। पाठशाला एवं रात्रि में प्रश्नमंच का आयोजन डॉ. मनीषा जैन द्वारा कराया गया।

– जम्बू जैन धवल (मंत्री-अ.भा.जैन युवा फैडरेशन, उज्जैन)

मुम्बई : यहाँ महापर्व के अवसर पर दादर स्थित शिवाजी मंदिर ऑडिटोरियम में **पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर** द्वारा प्रात: समयसार (कर्ताकर्माधिकार) एवं सायंकाल दशलक्षण धर्म व अन्य आध्यात्मिक विषयों पर अत्यंत सरल भाषा व अपनी विशेष रोचक शैली में व्याख्यानों का लाभ मिला। व्याख्यानों को सुनकर अनेक साधर्मियों की तत्त्वज्ञान के प्रति रुचि जागृत हुई। तत्त्वज्ञान को जानने एवं अध्यात्म को समझने की जिज्ञासा इतनी अधिक थी कि समय से पहले आकर ही 1500 साधर्मीजन अपनी सीट रोक लेते थे। अनेक साधर्मीजनों ने पहली बार अध्यात्म की बात सुनी और उनके जीवन में बड़ा परिवर्तन आया। व्याख्यानों से प्रभावित होकर नवीन पाठशालाएं भी प्रारम्भ हुईं।

ग्वालियर (म.प्र.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर किलागेट-आत्मायतन परिसर स्थित श्री वासुपूज्य पंचायती दिगम्बर जैन मन्दिर में **पण्डित शिखरचंदजी विदिशा** द्वारा प्रात: समयसार एवं सायंकाल मोक्षमार्गप्रकाशक विषय पर प्रवचनों का लाभ मिला। दशलक्षण पूजन एवं रात्रि में ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन पण्डित प्रवीणजी शास्त्री व पण्डित प्रदीपजी शास्त्री रानीताल द्वारा संपन्न कराये गये। सभी कार्यक्रम पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी शास्त्री के निर्देशन में संपन्न हुये।

भिण्ड (म.प्र.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर देवनगर स्थित सीमन्धर जिनालय में स्थानीय विद्वान **पण्डित अनिलजी शास्त्री, पण्डित राजीवजी शास्त्री एवं पण्डित आशीषजी शास्त्री** द्वारा प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त प्रात: दशलक्षण मंडल विधान एवं रत्नत्रय विधान का आयोजन स्थानीय विद्वान पण्डित दीपकजी शास्त्री, पण्डित सुमितजी शास्त्री, पण्डित वैभवजी शास्त्री, पण्डित विवेकजी शास्त्री तथा बाहर से पधारे पण्डित चेतनजी शास्त्री गुढाचन्द्रजी द्वारा कराया गया। **– पुष्पेन्द्र जैन**

बड़नगर (म.प्र.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन मन्दिर में **पण्डित राजकुमारजी शास्त्री उदयपुर** द्वारा प्रात: इष्टोपदेश एवं रात्रि में दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला।

भावनगर (गुज.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर **पण्डित अशोकजी लुहाड़िया मंगलायतन** द्वारा दशलक्षण विधान एवं गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन हुआ। तत्पश्चात् समयसार (निर्जरा अधिकार) एवं सायंकाल जिनेन्द्र-भक्ति व दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला।

बैंगलोर (कर्नाटक) : यहाँ महापर्व के अवसर पर श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर में **पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर** द्वारा दशलक्षण मंडल विधान, गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन हुए, तत्पश्चात् समयसार (जीवाजीवाधिकार) एवं रात्रि में जैनदर्शन के विभिन्न विषयों पर प्रवचनों का लाभ मिला।

औरंगाबाद (महा.) : यहाँ महापर्व के अवसर पर मुमुक्षु मण्डल में प्रात: दशलक्षण महामंडल विधान के उपरान्त **पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर** द्वारा प्रात: मोक्षमार्ग प्रकाशक, सायंकाल विभिन्न विषयों पर एवं दोपहर में स्वानुभव मंडल में समयसार (संवर अधिकार) पर प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त एक दिन **एलोरा गुरुकुल** में दोपहर को 'शिक्षा का प्रयोजन' विषय पर व्याख्यान हुआ। सायंकालीन प्रवचन के पूर्व स्थानीय विद्वानों द्वारा प्रवचन होते थे। विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित संजयजी राउत एवं श्री कुशलजी जैन द्वारा संपन्न हुये।

कटनी (म.प्र.) : यहाँ पर्व के अवसर पर सुभाष हॉल में **पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा** द्वारा प्रात: समयसार (निर्जरा अधिकार), दोपहर में पुरुषार्थसिद्धिउपाय एवं सायंकाल दशलक्षण धर्म व विभिन्न विषयों पर प्रवचनों का लाभ मिला।

भीलवाड़ा (राज.) : यहाँ पर्व के अवसर पर **डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री उदयपुर** द्वारा प्रात: सीमंधर जिनालय कावांखेड़ा में दशलक्षण मंडल विधान के उपरान्त समयसार पर एवं सायंकाल श्री चतुर्मुखी पार्श्वनाथ मंदिर आमलियों की बारी जिनालय में भक्तामर स्तोत्र की कक्षा व दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। **– सुकुमाल चौधरी**

सोनगढ (गुज.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान दिगंबर जैन विद्यार्थी गृह में प्रतिदिन प्रात: दशलक्षण मंडल विधान, गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन, **पण्डित सोनूजी शास्त्री** द्वारा दशलक्षण धर्म पर प्रवचन हुए एवं रात्रि में विद्यार्थियों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये।

गुना (म.प्र.) : यहाँ पर्व के अवसर पर **पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर** द्वारा समयसार (कलश 144) एवं दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला।

पुणे-बानेड (महा.) : यहाँ पर्व के अवसर पर **डॉ. प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा** द्वारा दोपहर में संख्यामान-उपमामान विषय पर कक्षा, सायंकाल पंचपरावर्तन, कर्म-सिद्धांत व तीन लोक विषय पर कक्षाओं का लाभ मिला। इस अवसर पर आयोजित सिद्धचक्र मण्डल विधान अनुभव जैन व नमन जैन मंगलार्थी द्वारा संपन्न कराया गया।

अहमदाबाद-मणिनगर (गुज.) : यहाँ पर्व के अवसर पर **पण्डित संजयजी सेठी जयपुर** द्वारा प्रात: समयसार, दोपहर में तत्त्वार्थसूत्र की कक्षा एवं सायंकाल दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत स्वानुभूति महिला मण्डल एवं पाठशाला के बच्चों द्वारा नाटक का मंचन एवं 'जैनधर्म एवं आधुनिक विज्ञान' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया।

श्वेताम्बर पर्यूषण में...

श्वेताम्बर पर्यूषण के अवसर पर मुम्बई चौपाटी सर्किल पर स्थित भारतीय विद्या भवन के विशाल वातानुकूलित हॉल में **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** के विभिन्न विषयों पर व्याख्यान हुये। इसके अतिरिक्त एक-एक व्याख्यान कमला हॉल बालकेश्वर एवं मुरार बाग सीपी टेंक में भी हुये। ज्ञातव्य है कि डॉ. भारिल्ल पिछले 34 वर्षों से श्वेताम्बर पर्यूषण में प्रवचनार्थ जा रहे हैं।

राजस्थान के मुख्यमंत्री द्वारा डॉ. भारिल्ल का सम्मान

जयपुर (राज.) : यहाँ रामनिवासबाग स्थित रविन्द्रमंच सभागृह में संस्कृत दिवस के अन्तर्गत राज्यस्तरीय विद्वत्सम्मान समारोह-2019 का आयोजन दिनांक 14 अगस्त को किया गया, जिसके अन्तर्गत अ.भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के महामंत्री, शताधिक पुस्तकों के लेखक, अन्तरराष्ट्रीयख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** को सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर संस्कृत के विकास में उल्लेखनीय योगदान हेतु संस्कृत शिक्षा विभाग-राजस्थान सरकार द्वारा विद्वत्पुरस्कारों के अन्तर्गत '**संस्कृत साधना सम्मान**' से राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत द्वारा 51 हजार रुपये की राशि से **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** को सम्मानित किया गया। साथ ही शॉल, श्रीफल व प्रशस्ति-पत्र भी भेंट किया गया। राज्य के शिक्षा मंत्री **श्री सुभाष गर्ग** ने डॉ.भारिल्ल के योगदान की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

शोक समाचार

(1) इन्दौर (म.प्र.) निवासी श्री प्रकाशचंदजी लुहाड़िया का दिनांक 16 अगस्त को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप साधना नगर जिनालय में लगने वाले शिविर आदि तत्त्वप्रचार की गतिविधियों से भी गहराई से जुड़े रहे।

ज्ञातव्य है कि आप स्व. श्री पूनमचंदजी लुहाड़िया मुम्बई के भाई थे। आपकी स्मृति में संस्था हेतु 2100/- रुपये प्राप्त हुये।

(2) खनियांधाना (म.प्र.) निवासी श्री श्यामलालजी चौधरी का दिनांक 8 सितम्बर को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। ज्ञातव्य है कि आप टोडरमल महाविद्यालय के स्नातक पण्डित शीतलकुमारजी शास्त्री के पिताजी एवं आकाशजी शास्त्री व अनिकेतजी शास्त्री के दादाजी थे। आपकी स्मृति में संस्था हेतु 1100/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्माएं चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हों - यही मंगल भावना है।

हार्दिक बधाई

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय की स्नातक **अनुभूति शास्त्री** एवं **निधि शास्त्री** को जैनदर्शन से आचार्य एवं ध्रुवधाम की छात्रा **विपाशा शास्त्री** को संस्कृत साहित्य से आचार्य करने पर दिल्ली में आयोजित दीक्षांत समारोह में मानव संसाधन विकास मंत्री एवं राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के कुलपति द्वारा स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया।

मुक्त विद्यापीठ हेतु सूचना

जून में आयोजित प्रथम सेमेस्टर परीक्षाओं की कॉपियाँ जिन विद्यार्थियों ने अभी तक नहीं भेजी हैं, वे शीघ्रता से भेजें एवं फोन से सूचित अवश्य करें -

संपर्क सूत्र - 9785645793 **(नीशू शास्त्री)**

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -

वेबसाईट - www.vitragvani.com

संपर्क सूत्र - श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई

Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

ये सभी प्रवचन सामग्री अब vitragvani एप पर भी उपलब्ध है।

R.N.I. No. 38278/83 Postal Regd. No. JaipurCity/421/2018-20

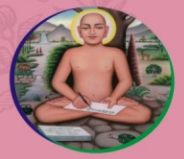

हार्दिक आमंत्रण

श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन शासन-प्रभावना ट्रस्ट, इन्दौर द्वारा

विश्व की अद्वितीय निर्माणाधीन रचना

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन, इन्दौर में आयोजित

श्री चौबीस तीर्थंकर विधान एवं भव्य वेदी शिलान्यास महोत्सव

शुक्रवार, 1 नवम्बर से रविवार, 3 नवम्बर 2019 तक

विद्वत्-समागम
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल
आदि अनेक विद्वान

विधानाचार्य
बा.ब्र. अभिनन्दनकुमारजी
निर्देशक
शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल

आप इस मंगल-महोत्सव में सपरिवार धर्म-लाभ लेने हेतु सादर आमंत्रित हैं।

आवास आदि की समुचित व्यवस्था हेतु अपना रजिस्ट्रेशन
www.dhaidweep.com पर online अवश्य करें।

रजिस्ट्रेशन की
अंतिम तिथि
1 अक्टूबर 2019

निवेदक

अजितप्रसाद जैन, दिल्ली	डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर	श्रीमती सोनल-मुकेश जैन, इन्दौर
अध्यक्ष	कार्यकारी अध्यक्ष	महामंत्री

एवं समस्त ट्रस्टीगण, श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन शासन-प्रभावना ट्रस्ट, इन्दौर (म.प्र.)

सम्पर्क सूत्र – 95843 72443 (अशोक शास्त्री) 98933 04432 (आवास विभाग)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**